

योग-दर्शन साँख्य-दर्शन की तरह बन्धन का मूल कारण अविवेक (Non-discrimination) को मानता है। पुरुष और प्रकृति के पार्थक्य का ज्ञान नहीं रहने के कारण ही आत्मा बन्धन-ग्रस्त हो जाती है। इसीलिये मोक्ष को अपनाने के लिये तत्त्वज्ञान पर अधिक बल दिया गया है। योग के मतानुसार तत्त्व-ज्ञान की प्राप्ति तब तक नहीं हो सकती है जब तक मनुष्य का चित्त विकारों से परिपूर्ण है। अतः योग-दर्शन में चित्त की स्थिरता को प्राप्त करने के लिये तथा चित्तवृत्ति का निरोध करने के लिये योग मार्ग की व्याख्या हुई है। योग का अर्थ योग-दर्शन में चित्तवृत्तियों का निरोध है। गीता में योग का अर्थ आत्मा का परमात्मा से मिलन माना गया है। परन्तु योग-दर्शन में योग का अर्थ है राजयोग। योग मार्ग की आठ सीढ़ियाँ हैं। इसलिये इसे योग के अष्टांग साधन (The Eighthfold Path of Yoga) भी कहा जाता है। योग के अष्टांग मार्ग इस प्रकार हैं-

(१) यम, (२) नियम, (३) आसन, (४) प्राणायाम, (५) प्रत्याहार, (६) धारणा, (७) ध्यान, (८) समाधि।

इन्हें 'योगांग' भी कहा जाता है। अब हम एक-एक कर योग के इन अंगों की व्याख्या करेंगे।

(१) यम- यम योग का प्रथम अंग है। बाह्य और आभ्यन्तर इन्द्रियों के संयम को क्रिया को 'यम' कहा जाता है। यम पाँच प्रकार के होते हैं-

(१) अहिंसा, (२) सत्य, (३) अस्तेय, (४) ब्रह्मचर्य, (५) अपरिग्रह।

अहिंसा का अर्थ है किसी समय किसी भी प्राणी की हिंसा नहीं करना। अहिंसा का अर्थ भी प्राणियों की हिंसा का परित्याग करना ही नहीं है, बल्कि इनके प्रति क्रूर व्यवहार का भी परित्याग करना है। योग-दर्शन में हिंसा को सभी बुराइयों का आधार माना गया है। यही कारण है कि इसमें अहिंसा के पालन पर अत्यधिक जोर दिया गया है।

सत्य का अर्थ है मिथ्या वचन का परित्याग। व्यक्ति को वैसे वचन का प्रयोग करना चाहिए जिससे सभी प्राणियों का हित हो। जिस वचन से किसी भी प्राणी का अहित हो उसका परित्याग परमावश्यक है। जैसा देखा सुना और अनुमान किया उसी प्रकार मन का नियन्त्रण करना चाहिये।

अस्तेय तीसरा यम है। दूसरे के धन का अपहरण करने की प्रवृत्ति का त्याग ही 'अस्तेय' है। दूसरे की सम्पत्ति पर अनुचित रूप से अधिकार जमाना 'स्तेय' कहा जाता है। इसलिये इस मनोवृत्ति का परित्याग ही अस्तेय का दूसरा नाम है।

ब्रह्मचर्य चौथा यम है। ब्रह्मचर्य का अर्थ है विषय-वासना की ओर झुकाने वाली प्रवृत्ति का परित्याग। ब्रह्मचर्य के द्वारा ऐसी इन्द्रियों के संयम का आदेश दिया जाता है जो कामेच्छा से सम्बन्धित है।

अपरिग्रह पाँचवा यम है। लोभवश अनावश्यक वस्तु के ग्रहण का त्याग ही अपरिग्रह कहा जाता है। उपरोक्त पाँच यमों के पालन में वर्ण, व्यवसाय, देशकाल के कारण किसी प्रकार का

अपवाद नहीं होना चाहिए। योग-दर्शन में मन को सबल बनाने के लिए ये पाँच प्रकार के यम का पालन आवश्यक समझा गया है। इनके पालन से मानव बुरी प्रवृत्तियों को वश में करने में सफल होता है जिसके फलस्वरूप वह योग-मार्ग में आगे बढ़ता है।

(२) नियम- 'नियम' योग का दूसरा अंग है। नियम का अर्थ है सदाचार को प्रश्रय देना। नियम भी पाँच माने गए हैं।

(क) शौच (Purity)- शौच के अन्दर बाह्य और आन्तरिक शुद्धि समाविष्ट है। स्नान, पवित्र भोजन, स्वच्छता के द्वारा बाह्य शुद्धि तथा मैत्री, करुणा, सहानुभूति, प्रसन्नता, कृतज्ञता के द्वारा आन्तरिक अर्थात् मानसिक शुद्धि को अपनाना चाहिये।

(ख) संतोष (Contentment)- उचित प्रयास से जो कुछ भी प्राप्त हो उसी से संतुष्ट रहना संतोष कहा जाता है। शरीर-यात्रा के लिये जो नितान्त आवश्यक है उससे भिन्न अलग चीज की इच्छा न करना संतोष है।

(ग) तपस् (Penance)- सर्दी-गर्मी सहने की शक्ति, लगातार बैठे रहना और खड़ा रहना, शारीरिक कठिनाइयों को झेलना, 'तपस्' कहा जाता है।

(घ) स्वाध्याय (Study)- स्वाध्याय का अर्थ है शास्त्रों का अध्ययन करना तथा ज्ञानी पुरुष के कथनों का अनुशीलन करना।

(ङ) ईश्वर प्रणिधान (Contemplation of God)- ईश्वर के प्रति श्रद्धा रखना परमावश्यक है। योग-दर्शन में ईश्वर के ध्यान को योग का सर्वश्रेष्ठ विषय माना जाता है।

यम और नियम में अन्तर यह है कि यम निषेधात्मक सद्गुण है जबकि नियम भावात्मक सद्गुण है।

(३) आसन- आसन तीसरा योगांग है। आसन का अर्थ है शरीर को विशेष मुद्रा में रखना आसन की अवस्था में शरीर का हिलना और

मन की चंचलता इत्यादि का अभाव हो जाता है, तन-मन दोनों को स्थिर रखना पड़ता है। शरीर को कष्ट से बचाने के लिये आसन को अपनाने का निर्देश दिया गया है। ध्यान की अवस्था में यदि शरीर को कष्ट की अनुभूति विद्यमान रहे तो ध्यान में बाधा पहुँच सकती है। इसीलिये आसन पर जोर दिया गया है। आसन विभिन्न प्रकार के होते हैं। आसन की शिक्षा साधक

को एक योग्य गुरु के द्वारा ग्रहण करनी चाहिए। आसन के द्वारा शरीर स्वस्थ हो जाता है तथा साधक को अपने शरीर पर अधिकार हो जाता है। योगासन शरीर को सबल तथा निरोग बनाने के लिये आवश्यक है।

(४) प्राणायाम- प्राणायाम योग का चौथा अंग है। श्वास-प्रक्रिया को नियन्त्रित करके उसमें एक क्रम लाना प्राणायाम कहा जाता है। जब तक व्यक्ति की साँस चलती रहती है तब तक उसका मन चंचल रहता है। श्वास-वायु के स्थगित होने से चित्त में स्थिरता का उदय होता है। प्राणायाम शरीर और मन को दृढ़ता प्रदान करता है। इस प्रकार प्राणायाम समाधि में पूर्णतः सहायक होता है। प्राणायाम के तीन भेद हैं-

(१) पूरक, (२) कुम्भक, (३) रेचक।

पूरक प्राणायाम का वह अंग है जिसमें गहरी साँस ली जाती है। **कुम्भक** में श्वास को भीतर रोका जाता है। **रेचक** में श्वास को बाहर निकाला जाता है। प्राणायाम का अभ्यास किसी गुरु के निर्देशानुसार ही किया जा सकता है। श्वास के व्यायाम से हृदय सबल होता है।

(५) प्रत्याहार- यह योग का पाँचवाँ अंग है। प्रत्याहार का अर्थ है इन्द्रियों के बाह्य विषयों से हटाना तथा उन्हें मन के वश में रखना। इन्द्रियाँ स्वभावतः अपने विषयों की ओर दौड़ती हैं। योगाभ्यास के लिये ध्यान को एक ओर लगाना होता है। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि इन्द्रियों को अपने-अपने विषयों से संसर्ग नहीं हो। प्रत्याहार के द्वारा इन्द्रियाँ अपने विषयों के पीछे से न चलकर मन के अधीन हो जाती हैं। प्रत्याहार को अपनाना अत्यन्त कठिन है। अनवरत अभ्यास, दृढ संकल्प और इन्द्रिय-निग्रह के द्वारा ही प्रत्याहार को अपनाया जा सकता है।

(६) धारणा- धारणा का अर्थ है "चित्त को अभीष्ट विषय पर जमाना"। धारणा आन्तरिक अनुशासन की पहली सीढ़ी है। धारणा में चित्त किसी एक वस्तु पर केन्द्रित हो जाता है। इस योगांग में चित्त को अन्य वस्तुओं से हटकर एक वस्तु पर केन्द्रीभूत कर देना पड़ता है। वह वस्तु बाह्य या आन्तरिक दोनों हो सकती है। वह वस्तु का कोई अंश अथवा सूर्य, चन्द्रमा या किसी देवता की प्रतिमा में से कोई भी रह सकती है। इस अवस्था की प्राप्ति के बाद साधक ध्यान के योग्य हो जाता है।

(७) ध्यान- ध्यान सातवाँ योगांग है। ध्यान का अर्थ है अभीष्ट विषय का निरन्तर अनुशीलन। ध्यान की वस्तु का ज्ञान अविच्छिन्न रूप से होता है जिसके फलस्वरूप विषय का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है। पहले विषयों के अंशों का ज्ञान होता है फिर सम्पूर्ण विषय की रूपरेखा विदित होती है।

(८) समाधि- समाधि अन्तिम योगांग है। इस अवस्था में ध्येय वस्तु की ही चेतना रहती है। इस अवस्था में मन अपने ध्येय विषय में पूर्णतः लीन हो जाता है जिसके फलस्वरूप उसे अपना कुछ भी ज्ञान

नहीं रहता । ध्यान की अवस्था में वस्तु को ध्यान-क्रिया और आत्मा को चेतना रहती है। परन्तु समाधि में यह चेतना लुप्त हो जाती है। इस अवस्था के प्राप्त हो जाने से 'चित्तवृत्ति का निरोध' हो जाता है। समाधि को योग-दर्शन में साधन के रूप में चित्रित किया गया है। समाधि की महत्ता इसलिये है कि उससे चित्तवृत्ति का निरोध होता है। इस प्रकार चित्तवृत्ति का निरोध साध्य हुआ।

